पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

मोहम्मद मकबूल आलम

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य

2023 का आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 471

27 जून, 2025

(माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेंद्र कुमार)

विचार के लिए मुद्दा

क्या विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-बारह, नवादा द्वारा सत्र परीक्षण संख्या 323/2023/सी.आई.एस. संख्या 3285/2014 में वारिसलीगंज थाना कांड संख्या 64/2011 से उत्पन्न आवेदन को खारिज करते समय पारित किया गया निर्णय सही है या नहीं?

हेडनोट्स

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 216—याचिकाकर्ता ने विपरीत पक्षकार संख्या 2 के खिलाफ धारा 302 के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए आवेदन दायर किया, जो संहिता, 1860 की धारा 306 के तहत मुकदमे का सामना कर रहा था—रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के अवलोकन के बाद विद्वान विचारण न्यायालय ने याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज कर दिया—पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के तहत, उच्च न्यायालय स्वयं के लिए साक्ष्य की फिर से सराहना करने का हकदार नहीं है जैसे कि वह अपील की अदालत के रूप में कार्य कर रहा है, क्योंकि पुनरीक्षण शक्ति को अपीलीय न्यायालय की शक्ति के बराबर नहीं माना जा सकता है, न ही इसे दूसरी अपीलीय क्षेत्राधिकार के रूप में भी माना जा सकता है।

निर्णीत: याचिकाकर्ता द्वारा आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप के लिए कोई आधार नहीं बनाया गया - संहिता, 1860 की धारा 302 के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए कोई पर्याप्त सामग्री नहीं - रिकॉर्ड पर साक्ष्य की सराहना में कोई विकृति या मनमानी नहीं - याचिका को समय पर खारिज कर दिया गया।

(पैराग्राफ 16, 35, 36)

न्याय दृष्टान्त

आशीष चड्ढा बनाम आशा कुमारी और अन्य, (2012) 1 एससीसी 680; संजय सिंह रामराव चव्हाण बनाम दत्तात्रेय गुलाबराव फाल्के, (2015) 3 एससीसी 123; जसविंदर सैनी बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली), (2013) 7 एससीसी 256; सोहन लाल बनाम राजस्थान राज्य, (1990) 4 एससीसी 580; सीबीआई बनाम करीमुल्लाह ओसान खान, (2014) 11 एससीसी 538; अनंत प्रकाश सिन्हा बनाम हरियाणा राज्य, (2016) 6 एससीसी 105; पी. कार्तिकालक्ष्मी बनाम श्री गणेश, (2017) 3 एससीसी 347; नल्लापारेड्डी श्रीधर रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2020) 12 एससीसी 467; सौंदराजन बनाम राज्य, (2023) 16 एससीसी 141; राजस्व खुफिया निदेशालय बनाम राज कुमार अरोड़ा एवं अन्य, 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 819— भरोसा किया गया।

अकालू अहीर और अन्य। बनाम रामदेव राम, **(1973) 2** एससीसी **583;** के. चिन्नास्वामी रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, **1962** एससीसी ऑनलाइन एससी **32;** दुली चंद बनाम दिल्ली प्रशासन, **(1975) 4** एससीसी **649;** जनता दल बनाम एच.एस. चौधरी एवं अन्य, **(1992) 4** एससीसी **305;** विमल सिंह बनाम खुमान सिंह एवं अन्य, **(1998) 7** एससीसी **323;** केरल राज्य बनाम

पुट्टुमना आई.जे. नंबूदिरी, **(1999) 2** एससीसी **452;** थैंकप्पन नाडा और अन्य। बनाम गोपाल कृष्णन, **(2002) 9** एससीसी **393;** जगन्नाथ चौधरी बनाम रामायण सिंह, **(2002) 5** एससीसी **659;** बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह उर्फबी.पी. सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य (अब झारखंड) एवं अन्य, **(2002) 6** एससीसी **650;** मंजू राम कलिता बनाम असम राज्य, **(2009) 13** एससीसी **330;** अमित कपूर बनाम रमेश चंदर, **(2012) 9** एससीसी **460;** गणेश बनाम शरणप्पा एवं अन्य, **(2014) 1** एससीसी **87;** श्लोक भारद्वाज बनाम रुनिका भारद्वाज एवं अन्य, **(2015) 2** एससीसी **721;** संजय सिंह आर. चव्हाण बनाम डी. जी. फाल्के, **(2015) 3** एससीसी **123;** मलकीत सिंह गिल बनाम छत्तीसगढ़ राज्य **(2022) 8** एससीसी **204**—संदर्भित किया गया।

अधिनियमों की सूची

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973; भारतीय दंड संहिता, 1860।

मुख्य शब्दों की सूची

आरोप में परिवर्तन; अतिरिक्त आरोप तैयार करना; पुनरीक्षण शक्ति; विकृति; मनमानी।

प्रकरण से उत्पन्न

वारिसलीगंज थाना कांड संख्या 64/2011 से उत्पन्न सत्र परीक्षण संख्या 323/2023/सीआईएस संख्या 3285/2014 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-12, नवादा द्वारा पारित अस्वीकृति आदेश।

पक्षकारों की ओर से उपस्थिति

याचिकाकर्ता की ओर से: श्री सत्यपाल सिंह, अधिवक्ता; श्री ओम प्रकाश श्रीवास्तव, अधिवक्ता।

राज्य की ओर से: मोहम्मद जैनुल आबेदीन, एपीपी।

रिपोर्टर द्वारा हेडनोट बनाया गया: आभाष चंद्र, अधिवक्ता

माननीय पटना उच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2023 का आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 471

थाना कांड संख्या-64 वर्ष-2011 थाना- वारसलीगंज जिला-नवादा से उत्पन्न

==========

मो. मकबूल आलम, पिता- स्वर्गीय नूर मोहम्मद, निवासी ग्राम- कादिरगंज, थाना- नवादा टाउन (कादिरगंज ओ.पी.), जिला- नवादा

.. याचिकाकर्ता

बनाम

1. बिहार राज्य
2. आयशा खातून, पिता- मंसूर आलम, स्वर्गीय मोहम्मद सज्जाद आलम की पत्नी, निवासी- माफ़ी गली, थाना-वारसलीगंज जिला-नवादा

... उत्तरदाता

==========

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता के लिए	:	श्री सत्यपाल सिंह, अधिवक्ता
		श्री ओम प्रकाश श्रीवास्तव, अधिवक्ता
राज्य के लिए	:	मोहम्मद ज़ैनुल आबेदीन, एपीपी

==========

कोरम: माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेन्द्र कुमार

मौखिक निर्णय

दिनांक : 27-06-2025

वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण याचिका याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 14.03.2023 के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके तहत विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-XII, नवादा ने वारिसलीगंज थाना कांड संख्या 64/2011 से उत्पन्न सत्र परीक्षण संख्या 323/2023/सी.आई.एस. संख्या 3285/2014 में आवेदन को खारिज कर दिया है।

मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि

2. अभियोजन पक्ष द्वारा धारा 216 सीआरपीसी के तहत आवेदन अंतिम बहस के चरण में दायर किया गया था, जब अभियोजन पक्ष के साक्ष्य दर्ज करने के बाद अभियुक्त आयशा खातून का बयान धारा 313 सीआरपीसी के तहत दर्ज किया गया था। आरोपी आयशा खातून, जो यहां ओ.पी. नंबर 2 है, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के तहत आरोप का सामना कर रही थी। हालांकि, अभियोजन पक्ष के आवेदन के अनुसार, पी.डब्लू.-1, पी.डब्लू.-5 और पी.डब्लू.-8 के साक्ष्य में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए पर्याप्त सबूत सामने आए थे। हालांकि, अभियोजन पक्ष द्वारा दायर आवेदन का आरोपियों ने विरोध किया और कहा कि आरोपियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं थी। हालांकि, दोनों पक्षों को सुनने और रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों के अवलोकन के बाद, विद्वान विचारण न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए अभियोजन पक्ष के आवेदन को खारिज कर दिया है, यह मानते हुए कि अभियोजन पक्ष के आवेदन में कोई सार या योग्यता नहीं है। विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियोजन पक्ष के सभी गवाहों के साक्ष्यों, जिसमें चोट रिपोर्ट और डॉक्टर भी शामिल हैं, का गहनता से अध्ययन किया है, तथा पाया है कि अभियुक्त आयशा खातून के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत अतिरिक्त आरोप लगाने के लिए कोई पर्याप्त सामग्री नहीं है।

3. अतः, इस आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने वर्तमान आपराधिक पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत की है।

4. मामला प्रवेश के चरण में है।

5. मैंने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान एपीपी को सुना।

6. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियोजन पक्ष की ओर से दायर आवेदन को मनमाने ढंग से और गलत तरीके से खारिज कर दिया है। अभियोजन पक्ष के गवाहों के साक्ष्य में प्रतिवादी संख्या 2 के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत आरोप जोड़ने के लिए पर्याप्त सामग्री है। अतः, आरोपित आदेश कानून की नजर में टिकने योग्य नहीं है।

7. हालांकि, इसके विपरीत, राज्य के विद्वान एपीपी ने याचिकाकर्ता की प्रार्थना का पुरजोर विरोध करते हुए कहा कि आरोपित आदेश में कोई अवैधता या कमी नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के अनुसार ट्रायल के दौरान कोई अतिरिक्त आरोप जोड़ना विचारण न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति है। उन्होंने यह भी कहा कि पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के तहत, इस कोर्ट के पास आरोपित आदेश में हस्तक्षेप करने का सीमित क्षेत्राधिकार है। उन्होंने यह भी कहा कि यह कानून का स्थापित सिद्धांत है कि यदि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के अनुसार दो दृष्टिकोण संभव हैं और विचारण न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य/सामग्री की सराहना के बाद एक उचित और प्रशंसनीय दृष्टिकोण लिया है, तो पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के तहत उसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, क्योंकि पुनरीक्षण न्यायालय को अपने निष्कर्ष पर पहुंचने और विचारण न्यायालय के दृष्टिकोण को अपने द्वारा प्रतिस्थापित करने के लिए रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री या साक्ष्य का फिर से मूल्यांकन करने की आवश्यकता नहीं है। इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा दायर याचिका में कोई दम नहीं है, जिसे तत्काल खारिज किया जा सकता है।

उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार की सीमा और दायरा

8. इससे पहले कि मैं पक्षों के प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करूं, उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार की सीमा और दायरे को देखना वांछनीय है।

9. वैधानिक प्रावधानों और न्यायिक मिसालों के अनुसार, यह कानून का स्थापित सिद्धांत है कि उच्च न्यायालय को प्रदान किया गया पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार धारा 397 के साथ धारा 401 सीआरपीसी के तहत एक प्रकार का पैतृक या पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार है, ताकि अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णय, आदेश, सजा या निष्कर्ष से उत्पन्न न्याय की चूक को ठीक किया जा सके, जैसा कि अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा दर्ज या पारित किसी निष्कर्ष, सजा या आदेश की शुद्धता, वैधता या औचित्य और ऐसे अवर न्यायालयों की किसी कार्यवाही की नियमितता पर गौर किया जा सके।

10. हालांकि, उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग विवेकाधीन प्रकृति का है जिसे न्याय के हित में विवेकपूर्ण तरीके से लागू किया जाना चाहिए।

11. पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के तहत, उच्च न्यायालय अपने लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने का हकदार नहीं है जैसे कि वह अपील न्यायालय के रूप में कार्य कर रहा हो, क्योंकि पुनरीक्षण शक्ति को अपील न्यायालय की शक्ति के बराबर नहीं माना जा सकता है, न ही इसे द्वितीय अपीलीय क्षेत्राधिकार के रूप में माना जा सकता है। इसलिए, आमतौर पर, उच्च न्यायालय के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करना और उस पर अपना निष्कर्ष निकालना उचित नहीं है जब साक्ष्य को पहले से ही परीक्षण और अपील न्यायालय द्वारा सराहा जा चुका हो, जब तक कि कानून या प्रक्रिया की

स्पष्ट त्रुटि और निष्कर्ष की विकृति जैसी असाधारण स्थितियाँ न हों, जिससे न्याय का घोर हनन हो, जो उच्च न्यायालय के ध्यान में लाई गई हों। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनेक अवसरों पर ऐसी अपवादात्मक स्थितियों का उल्लेख किया गया है, जो इस प्रकार हैं:-

(i) जब यह पाया जाता है कि विचारण न्यायालय के पास मामले की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है या;

(ii) जब यह पाया जाता है कि पुनरीक्षण के अधीन आदेश में स्पष्ट रूप से अवैधता है या;

(iii) जहां विचारण न्यायालय ने अवैध रूप से उन साक्ष्यों को बाहर कर दिया है जिन पर अन्यथा विचार किया जाना चाहिए था या;

(iv) जहां निर्णय/आदेश अस्वीकार्य साक्ष्यों पर आधारित है, या;

(v) जहां मामले को पुष्ट करने वाले महत्वपूर्ण साक्ष्यों को विचारण न्यायालय या अपीलीय कोर्ट द्वारा नजरअंदाज कर दिया गया है या;

(vi) जहां दर्ज किया गया निष्कर्ष किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है या;

(vii) जहां साक्ष्यों की गलत तरीके से सराहना की गई है या;

(viii) जहां न्यायिक विवेक का प्रयोग मनमाने ढंग से या स्वेच्छाचारी तरीके से किया गया है या;

(ix) जहां दोषमुक्ति अपराध के संयोजन पर आधारित है, जो कानून के तहत अमान्य है।

12. हालांकि, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह चेतावनी दी गई है कि उपर्युक्त प्रकार की स्थितियाँ उदाहरणात्मक हैं और संपूर्ण नहीं हैं।

13. पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के संबंध में, कोई व्यक्ति

निम्नलिखित न्यायिक मिसालों का संदर्भ ले सकता है:

(i) अकालू अहीर और अन्य बनाम रामदेव राम
(1973) 2 एससीसी 583

(ii) के. चिन्नास्वामी रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य
1962 एससीसी ऑनलाइन एससी 32

(iii) दुली चंद बनाम दिल्ली प्रशासन
(1975) 4 एससीसी 649

(iv) जनता दल बनाम एच.एस. चौधरी और अन्य
(1992) 4 एससीसी 305

(v) विमल सिंह बनाम खुमान सिंह और अन्य
(1998) 7 एससीसी 323

(vi) केरल राज्य बनाम पुत्तुमना आई. जे. नंबूदिरी
(1999) 2 एससीसी 452

(vii) थैंकप्पन नाडा और अन्य बनाम गोपाल कृष्णन
(2002) 9 एससीसी 393

(viii) जगन्नाथ चौधरी बनाम. रामायण सिंह
(2002) 5 एससीसी 659

(ix) बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह उर्फ बी.पी. सिंह एवं अन्य।
बनाम बिहार राज्य (अब झारखंड) और अन्य।
(2002) 6 एससीसी 650

(x) मंजू राम कलिता बनाम असम राज्य
(2009) 13 एससीसी 330

(xi) अमित कपूर बनाम रमेश चंदर
(2012) 9 एससीसी 460

(xii) गणेश बनाम. शरणप्पा और अन्य.
(2014) 1 एससीसी 87

(xiii) श्लोक भारद्वाज बनाम रुनिका भारद्वाज एवं अन्य
(2015) 2 एससीसी 721

(xiv) संजय सिंह आर. चव्हाण बनाम डी. जी. फाल्के
(2015) 3 एससीसी 123

(xv) मलकीत सिंह गिल बनाम छत्तीसगढ़ राज्य

(2022) 8 एससीसी 204

14. यहां आशीष चड्ढा बनाम आशा कुमारी एवं अन्य **(2012) 1** एससीसी **680** की रिपोर्ट का संदर्भ लेना भी लाभदायक होगा, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय आरोप तय करने के मामले में उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार से निपट रहा था। उस मामले में विद्वान विचारण न्यायालय ने आरोपी के खिलाफ आरोप तय किया था, जबकि उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के पुनर्मूल्यांकन/पुनर्मूल्यांकन के बाद विचारण न्यायालय के आदेश को खारिज कर दिया था, जिसमें आरोपी के खिलाफ कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं पाया गया था। इस संदर्भ में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने फैसले के पैरा-20 में माना कि उच्च न्यायालय को अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में ऐसा नहीं करना चाहिए था, क्योंकि यह विचारण न्यायालय है जिसे यह तय करना है कि क्या रिकॉर्ड पर मौजूद सबूत आरोपी के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनाने के लिए पर्याप्त हैं ताकि उसके खिलाफ आरोप तय किया जा सके।

15. जैसा कि संजयसिंह रामराव चव्हाण बनाम दत्तात्रेय गुलाबराव फाल्के, **(2015) 3** एससीसी **123** में रिपोर्ट किया गया है, को भी लाभप्रद रूप से संदर्भित किया जा सकता है। यहां, माननीय सर्वोच्च न्यायालय एक ऐसी स्थिति से निपट रहा था, जहां संबंधित न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पुलिस द्वारा दायर क्लोजर रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया था, जिसमें आरोपी द्वारा उसके खिलाफ आपराधिक कार्यवाही बंद करने का संदर्भ दिया गया था। विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा पारित इस आदेश को शिकायतकर्ता ने उच्च न्यायालय में आपराधिक पुनरीक्षण में चुनौती दी थी और उच्च न्यायालय ने विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया था। यहां, माननीय सर्वोच्च

न्यायालय ने माना कि विद्वान मजिस्ट्रेट ने मामले के पूरे रिकॉर्ड को देखा था, पुलिस द्वारा दायर रिपोर्ट तक सीमित नहीं था और एक तर्कसंगत आदेश पारित किया था, जिसमें कहा गया था कि अपीलकर्ता को प्रक्रिया जारी करने के उद्देश्य से संज्ञान लेने के लिए यह उपयुक्त मामला नहीं था। जब तक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश विकृत नहीं था या अदालत द्वारा लिया गया दृष्टिकोण पूरी तरह से अनुचित नहीं था या किसी भी प्रासंगिक सामग्री पर विचार नहीं किया गया था या रिकॉर्ड को स्पष्ट रूप से गलत तरीके से पढ़ा गया था, तब तक पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा आदेश को रद्द करना उचित नहीं था, केवल इसलिए कि दूसरा दृष्टिकोण संभव है।

<u>वर्तमान मामला</u>

16. वर्तमान मामले पर आते हुए पता चला कि अभियोजन पक्ष ने धारा 302 भा.दं.सं. के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए धारा 216 सीआरपीसी के तहत एक आवेदन दायर किया है। हालांकि, विद्वान विचारण न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों के अवलोकन के बाद पाया है कि धारा 302 भा.दं.सं. के तहत आरोपी के खिलाफ आरोप तय करने के लिए कोई पर्याप्त सामग्री नहीं है, और इसलिए, अभियोजन पक्ष द्वारा अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए दायर आवेदन को खारिज कर दिया गया। धारा 216 सीआरपीसी का अर्थ और महत्व

17. मामले पर बेहतर विचार के लिए, धारा 216 सीआरपीसी का अर्थ और महत्व जानना आवश्यक होगा जो इस प्रकार है:

"**216.** न्यायालय आरोप में परिवर्तन कर सकता है।

(1) कोई भी न्यायालय निर्णय सुनाए जाने से पहले किसी भी

समय किसी भी आरोप में परिवर्तन या वृद्धि कर सकता है।

(2) प्रत्येक ऐसे परिवर्तन या वृद्धि को अभियुक्त को पढ़कर सुनाया जाएगा और समझाया जाएगा।

(3) यदि आरोप में परिवर्तन या वृद्धि ऐसी है कि न्यायालय की राय में, मुकदमे के तुरंत आगे बढ़ने से अभियुक्त को उसके बचाव में या अभियोक्ता को मामले के संचालन में प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना नहीं है, तो न्यायालय, अपने विवेकानुसार, ऐसे परिवर्तन या वृद्धि के बाद, मुकदमे को इस प्रकार आगे बढ़ा सकता है मानो परिवर्तित या वृद्धि किया गया आरोप मूल आरोप रहा हो।

(4) यदि परिवर्तन या वृद्धि ऐसी है कि मुकदमे के तुरंत आगे बढ़ने से अभियुक्त की राय में, अभियुक्त को उसके बचाव में या अभियोक्ता को मामले के संचालन में प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना नहीं है न्यायालय, अभियुक्त या अभियोजक के प्रति पूर्वोक्त पक्षपात करने के लिए, या तो नए परीक्षण का निर्देश दे सकता है या आवश्यक अवधि के लिए परीक्षण स्थगित कर सकता है।

(5) यदि परिवर्तित या जोड़े गए आरोप में वर्णित अपराध ऐसा है जिसके अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी आवश्यक है, तो मामले को तब तक आगे नहीं बढ़ाया जाएगा जब तक कि ऐसी मंजूरी प्राप्त न हो जाए, जब तक कि उन्हीं तथ्यों पर अभियोजन के लिए मंजूरी पहले ही प्राप्त न हो गई हो जिन पर परिवर्तित या जोड़े गए आरोप आधारित हैं।

18. यहां **जसविंदर सैनी बनाम राज्य (एनसीटी ऑफ दिल्ली), (2013) 7 एससीसी 256** का संदर्भ लेना लाभदायक होगा, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने धारा 216 सीआरपीसी पर विचार करने के बाद निम्न प्रकार से निर्णय दिया है:

"11. उपरोक्त को सरलता से पढ़ने पर पता चलता है कि न्यायालय की किसी भी आरोप को बदलने या जोड़ने की शक्ति असीमित है, बशर्ते कि ऐसा जोड़ना और/या परिवर्तन निर्णय सुनाए जाने से पहले किया गया हो। धारा 216 की उप-धारा (2) से (5) उस प्रक्रिया से संबंधित है जिसका पालन न्यायालय द्वारा किसी भी आरोप को बदलने या जोड़ने का निर्णय लेने के बाद किया जाना चाहिए। संहिता की धारा 217 उस समय गवाहों को वापस बुलाने से संबंधित है जब न्यायालय द्वारा मुकदमा शुरू होने के बाद आरोप को बदला या जोड़ा जाता है। उपरोक्त के आलोक में, निर्णय से पहले किसी भी समय आरोप जोड़ने या बदलने की न्यायालय की क्षमता के बारे में कोई संदेह नहीं हो सकता है। ऐसी परिस्थितियाँ जिनमें ऐसा जोड़ना हालांकि, धारा 216 में कोई परिवर्तन या पुनरीक्षण नहीं किया जा सकता है। यह बात तो सामान्य है कि इस तरह के किसी भी जोड़ या परिवर्तन का सवाल आम तौर पर या तो इसलिए उठता है क्योंकि अदालत को पहले से तय आरोप किसी कारण से दोषपूर्ण लगता है या इसलिए क्योंकि अदालत के सामने आने वाले साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए ट्रायल शुरू होने के बाद ऐसा जोड़ना आवश्यक माना जाता है। (जोर दिया गया)

19. सोहन लाल बनाम राजस्थान राज्य, (1990) 4 एससीसी 580 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने "किसी आरोप को बदलना या जोड़ना" वाक्यांश का अर्थ स्पष्ट करते हुए निम्न प्रकार से कहा है:

"12. किसी आरोप में जोड़ने का अर्थ है एक नया आरोप जोड़ना। किसी आरोप में परिवर्तन का अर्थ है किसी मौजूदा आरोप में परिवर्तन या भिन्नता या कोई अलग आरोप बनाना। इस धारा के तहत किसी आरोप या आरोपों में वृद्धि या परिवर्तन का तात्पर्य एक या अधिक मौजूदा आरोप या आरोपों से है। जब अपीलकर्ता विजया बाई और जिया बाई को सभी आरोपों से मुक्त

कर दिया गया और उनके खिलाफ कोई आरोप मौजूद नहीं था, तो स्वाभाविक रूप से उनके मामले में धारा 216 सीआरपीसी के तहत आवेदन स्वीकार्य नहीं था। अपीलकर्ता सोहन लाल, पदम चंद और विष्णु के मामलों में जिनके खिलाफ धारा 427 भा.दं.सं. के तहत आरोप पहले से ही मौजूद थे, निश्चित रूप से आरोप में वृद्धि या परिवर्तन का सवाल उठ सकता था। विद्वान मजिस्ट्रेट इसलिए धारा 216 सीआरपीसी के तहत आवेदन का निपटारा करते समय केवल अपीलकर्ता विजया बाई और जिया बाई के खिलाफ आरोप तय करने का अधिकार नहीं था।

13. अन्य तीन अपीलकर्ताओं, अर्थात् सोहन लाल, पदम चंद और विष्णु के संबंध में वे पहले से ही मामले में आरोपी थे। धारा 216 सीआरपीसी के तहत अभियुक्तों की परिकल्पना की गई है और आरोपों में परिवर्तन निर्णय सुनाए जाने से पहले किसी भी समय किया जा सकता है। हम यह स्पष्ट करते हैं कि किसी भी पक्ष, न तो वास्तविक शिकायतकर्ता और न ही अभियुक्त या अभियोजन पक्ष को आरोप में कोई वृद्धि या परिवर्तन करने का कोई निहित अधिकार नहीं है, क्योंकि यह धारा 216 सीआरपीसी के तहत प्रदान नहीं किया गया है। यदि पक्षकारों द्वारा अपनाए जाने वाले इस तरह के मार्ग की अनुमति दी जाती है, तो आपराधिक न्यायालय के लिए अपनी कार्यवाही समाप्त करना लगभग असंभव हो जाएगा और त्वरित सुनवाई की अवधारणा खतरे में पड़ जाएगी। (जोर दिया गया)

23. **नल्लापारेड्डी श्रीधर रेड्डी बनाम ए.पी. राज्य, (2020) 12 एससीसी 467** में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय उस स्थिति से निपट रहा था, जहां धारा 216 सीआरपीसी के तहत अभियोजन पक्ष द्वारा भा.दं.सं. की धारा 406 और 420 के तहत अतिरिक्त आरोप जोड़ने के आवेदन को विद्वान विचारण न्यायालय ने खारिज कर दिया था। हालांकि, पुनरीक्षण पर, उच्च

न्यायालय ने विचारण न्यायालय के आदेश को खारिज कर दिया था, यह मानते हुए कि विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने के कारणों का खुलासा नहीं किया था कि धारा 406 और 420 भा.दं.सं. की सामग्री आकर्षित नहीं हुई थी, और इसलिए, उच्च न्यायालय ने धारा 420 और 406 भा.दं.सं. के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने का निर्देश दिया था। रिकॉर्ड पर लाए गए गवाहों के बयान का मूल्यांकन करना।

24. पी. कार्तिक लक्ष्मी केस (सुप्रा) सहित न्यायिक मिसालों पर चर्चा करने के बाद, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने नल्लापारेड्डी श्रीधर रेड्डी केस (सुप्रा) में निम्नलिखित माना है:

> "21. उपरोक्त मिसालों से यह स्पष्ट है कि धारा 216 न्यायालय को किसी भी आरोप को बदलने या संशोधित करने की एक विशेष और व्यापक शक्ति प्रदान करती है। उप-धारा (1) में "निर्णय सुनाए जाने से पहले किसी भी समय" शब्दों का प्रयोग न्यायालय को साक्ष्य, तर्क और निर्णय को सुरक्षित रखने के पूरा होने के बाद भी आरोपों को बदलने या जोड़ने की अपनी शक्तियों का प्रयोग करने का अधिकार देता है। आरोप में परिवर्तन या वृद्धि तब की जा सकती है जब न्यायालय की राय में आरोप निर्धारण में कोई चूक हुई हो या अभिलेख पर लाई गई सामग्री की प्रथम दृष्टया जांच करने पर न्यायालय कथित अपराध के तथ्यात्मक तत्वों के अस्तित्व के बारे में अनुमानात्मक राय बनाता हो। आरोप में वृद्धि या वृद्धि पर निर्णय लेते समय न्यायालय द्वारा अपनाया जाने वाला परीक्षण यह है कि अभिलेख पर लाई गई सामग्री का कथित अपराध के तत्वों से सीधा संबंध या संबंध होना चाहिए। आरोप जोड़ने से केवल अतिरिक्त आरोपों के लिए सुनवाई शुरू होती है, जिसके बाद साक्ष्य के आधार पर यह निर्धारित किया जाता है कि

> अभियुक्त को अतिरिक्त आरोपों के लिए दोषी ठहराया जा सकता है या नहीं। न्यायालय को धारा 216 के तहत अपनी शक्तियों का विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग करना चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि अभियुक्त को कोई पूर्वाग्रह न हो और उसे निष्पक्ष सुनवाई की अनुमति दी जाए। न्यायालय की शक्ति पर एकमात्र बाधा आरोप जोड़े जाने या उनमें परिवर्तन किए जाने से अभियुक्त को होने वाला संभावित पूर्वाग्रह है। उप-धारा (4) तदनुसार न्यायालयों द्वारा अपनाए जाने वाले दृष्टिकोण को निर्धारित करती है, जहां पूर्वाग्रह उत्पन्न हो सकता है।" (जोर दिया गया)

25. सौंदराजन बनाम राज्य, **(2023) 16** एससीसी **141** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय के पैराग्राफ संख्या 16 में निम्नलिखित माना है:

> "17. हम पाते हैं कि इस मामले में आरोप बहुत लापरवाही से तय किया गया है। आरोप तय करते समय विचारण न्यायालय को बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। किसी दिए गए मामले में, ऐसी कोई भी त्रुटि या चूक बरी होने और/या रिमांड के आदेश के कारण ट्रायल में लंबी देरी का कारण बन सकती है, जिसे धारा 464 सीआरपीसी की उप-धारा (2) के तहत पारित किया जा सकता है। विचारण न्यायालय के कर्तव्य के अलावा, सरकारी वकील का भी कर्तव्य है कि वह सतर्क रहे और यदि उचित आरोप तय नहीं किया जाता है, तो उचित आरोप तय करने के लिए अदालत में आवेदन करना उसका कर्तव्य है। (जोर दिया गया)

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राजस्व खुफिया निदेशालय बनाम राज कुमार अरोड़ा और अन्य के नवीनतम निर्णय में, जैसा कि 2025 एससीसी ऑनलाइन एससी 819 में रिपोर्ट किया गया है, विभिन्न न्यायिक

मिसालों का हवाला देते हुए धारा 216 सीआरपीसी की सीमा और अधिदेश पर विस्तार से चर्चा की है और निम्नानुसार माना है:

> "**143.** इस प्रावधान के तहत, किसी भी न्यायालय को निर्णय सुनाए जाने से पहले किसी भी समय अभियुक्त के खिलाफ तैयार किए गए किसी भी आरोप में "परिवर्तन" या "जोड़ने" का अधिकार है। इसलिए, एक बाहरी समय सीमा निर्धारित की गई है, यानी मामले में निर्णय सुनाए जाने के बाद न्यायालयों को दी गई शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। हालांकि यह प्रावधान स्पष्ट रूप से परीक्षण के चरण के लिए प्रावधान नहीं करता है जिसके बाद धारा 216 सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है, फिर भी तर्क और औचित्य स्पष्ट रूप से धारा 228 सीआरपीसी के तहत विचारण न्यायालय द्वारा आरोप तय किए जाने के बाद इसका प्रयोग करने की आवश्यकता है। क्योंकि अगर कोई आरोप तय नहीं किया गया है, तो उसे जोड़ने या बदलने का कोई अवसर नहीं है। एक स्वाभाविक परिणाम के रूप में, यदि किसी अभियुक्त को पहले ही धारा 227 सीआरपीसी के तहत आरोप मुक्त कर दिया गया है, तो धारा 216 सीआरपीसी के तहत कोई आवेदन या कार्रवाई स्वीकार्य नहीं होगी।
>
> **144**. न्यायालय किसी भी आरोप में परिवर्तन या जोड़ सकता है स्वयं या संबंधित पक्षों द्वारा आवेदन पर। इसलिए, न्यायालय द्वारा ऐसी शक्ति का प्रयोग स्वप्रेरणा से भी किया जा सकता है। धारा 216 सीआरपीसी के तहत यह शक्ति संबंधित न्यायालय के लिए अनन्य है और कोई भी पक्ष अधिकार के रूप में आवेदन दायर करके आरोप में इस तरह के जोड़ या परिवर्तन की मांग नहीं कर सकता है। विचारण न्यायालय को ट्रायल के उचित चरण में यह तय करना होगा कि उचित आरोप तैयार किया गया है या नहीं। मामले की व्यापक संभावनाओं, प्रस्तुत साक्ष्य और दस्तावेजों के कुल प्रभाव पर विचार करने के बाद, विचारण न्यायालय को यह संतुष्ट होना चाहिए कि धारा 216 के तहत शक्ति का प्रयोग आवश्यक है। प्रावधान को प्रत्येक मामले में आरोपी व्यक्ति(यों) के लिए निष्पक्ष और पूर्ण सुनवाई सुनिश्चित करने के हितकर उद्देश्य से अधिनियमित किया गया है। इसलिए, आरोप में परिवर्तन करना मौजूदा आरोप में बदलाव करना और एक अलग आरोप बनाना होगा।
>
> **149**. इसलिए, जब न्यायालय धारा 216 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करता है धारा 216 के अनुसार, या तो स्वयं या पक्षकारों द्वारा किए गए आवेदन पर, और आरोप को "बदलता" है, तो यह आवश्यक होगा कि मौजूदा आरोप में बदलाव किया जाए और एक नया आरोप बनाया जाए।

> **151.** धारा 216 सीआरपीसी न्यायालय को दो काम करने की शक्ति प्रदान करती है - एक, आरोप को बदलना और दूसरा, आरोप में कुछ जोड़ना। कहीं भी, प्रावधान स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचता है कि आरोप को पूरी तरह से हटाया जा सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायालय को एक विस्तृत और व्यापक शक्ति दी गई है। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं होना चाहिए कि प्रदान की गई शक्तियों की कोई सीमा नहीं है।
>
> (जोर दिया गया)

27. इस प्रकार, धारा 216 सीआरपीसी के वैधानिक प्रावधानों और संबंधित न्यायिक उदाहरणों से यह उभर कर आता है कि धारा 216 सीआरपीसी न्यायालय को आरोप तय होने के बाद, लेकिन निर्णय सुनाए जाने से पहले, किसी भी समय अभियुक्त के विरुद्ध पहले से तय किए गए किसी भी आरोप को बदलने या जोड़ने का अधिकार देती है।

28. पहले से तय किए गए आरोप में इस तरह के बदलाव या जोड़ने का अवसर दो स्थितियों में आता है, पहला, जब न्यायालय को पहले से तय किए गए आरोप में किसी कारण से त्रुटि मिलती है या जब न्यायालय को लगता है कि मुकदमे के दौरान उसके सामने आए साक्ष्य को देखते हुए आरोप में बढ़ोतरी करना आवश्यक है।

29. आरोप में बदलाव का मतलब है अतिरिक्त आरोप में बदलाव या भिन्नता या अलग आरोप लगाना। हालांकि, आरोप में बदलाव से आरोप हटाकर अभियुक्त को बरी नहीं किया जा सकता, क्योंकि आरोप तय होने के बाद मुकदमे का नतीजा केवल बरी होने के रूप में निकलता है। या दोषसिद्धि। मुकदमे के बीच में, आरोप का सामना कर रहे अभियुक्त को मुक्त नहीं किया जा सकता। यदि अभियुक्त अपने विरुद्ध आरोप तय किए जाने से व्यथित है, तो उसके पास आरोप तय करने के आदेश के विरुद्ध उचित

कार्यवाही के माध्यम से उच्च न्यायालय में उपाय है, लेकिन अभियुक्त को मुक्त करने या अभियुक्त के विरुद्ध पहले से तय किए गए आरोप को हटाने के लिए न्यायालय द्वारा धारा 216 सीआरपीसी का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

30. यह भी सामने आता है कि यदि अभियुक्त को पहले से ही मुक्त किया जा चुका है, या अभियुक्त के विरुद्ध कोई आरोप नहीं है, तो न्यायालय द्वारा उसके विरुद्ध आरोप तय करने के लिए धारा 216 सीआरपीसी का प्रयोग नहीं किया जा सकता, क्योंकि न्यायालय आरोप तय करने के पिछले चरण पर वापस नहीं जा सकता।

31. यह भी सामने आता है कि न्यायालय द्वारा धारा 216 सीआरपीसी का प्रयोग स्वप्रेरणा से या संबंधित पक्षों द्वारा आवेदन किए जाने पर किया जा सकता है। हालांकि, धारा 216 सीआरपीसी के अंतर्गत शक्ति संबंधित न्यायालय के लिए अनन्य है और कोई भी पक्ष इस तरह के जोड़ या परिवर्तन की मांग नहीं कर सकता है। आरोप के संबंध में आवेदन दायर करके अधिकार के रूप में।

32. यह भी उभर कर आता है कि न्यायालय द्वारा धारा 216 सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग मनमाना नहीं होना चाहिए, बल्कि जांच के दौरान एकत्रित सामग्री या परीक्षण के दौरान रिकॉर्ड पर लाए गए साक्ष्य के रूप में रिकॉर्ड पर प्रासंगिक सामग्री के आधार पर होना चाहिए।

33. यह भी उभर कर आता है कि धारा 216 सीआरपीसी के तहत शक्ति का प्रयोग करने वाले न्यायालय का यह भी कर्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि आरोप में वृद्धि या परिवर्तन से अभियुक्त या अभियोजन पक्ष को कोई पूर्वाग्रह न हो।

34. अब मामले पर वापस आते हुए, मुझे लगता है कि अभियुक्त आयशा खातून जो इस मामले में विपक्षी पक्ष संख्या 2 है, भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के तहत आरोप का सामना कर रही थी। अभियोजन पक्ष के साक्ष्य दर्ज किए गए और अभियुक्त का बयान भी धारा 313 सीआरपीसी के तहत दर्ज किया गया और उसके बाद मामले को अंतिम बहस के लिए तय किया गया। हालाँकि, इस स्तर पर, अभियोजन पक्ष द्वारा धारा 216 के तहत आवेदन दायर किया गया था। भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत आरोप जोड़ने के लिए सीआरपीसी में आवेदन किया, जिसमें दलील दी गई कि रिकॉर्ड पर पर्याप्त सबूत मौजूद हैं। हालांकि, आरोपित आदेश से यह पता चलता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने रिकॉर्ड पर मौजूद सभी सामग्रियों का अध्ययन किया और अभियोजन पक्ष के गवाहों के साक्ष्य का विस्तृत मूल्यांकन किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत आरोप जोड़ने के लिए पर्याप्त सामग्री नहीं थी।

35. मैंने पहले ही इस न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार की सीमा और दायरे पर चर्चा की है। मुझे लगता है कि इस न्यायालय द्वारा आरोपित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए याचिकाकर्ता द्वारा कोई आधार नहीं बनाया गया है। याचिकाकर्ता का एकमात्र निवेदन यह है कि मुकदमे के दौरान लाए गए साक्ष्य के अनुसार, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत अतिरिक्त आरोप विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा तय किया जाना चाहिए था, लेकिन मुझे लगता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने पूरे अभियोजन पक्ष के साक्ष्य का विस्तृत मूल्यांकन किया है और निष्कर्ष निकाला है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत अतिरिक्त आरोप तय करने के लिए कोई पर्याप्त सामग्री नहीं है। आरोपित आदेश एक तर्कसंगत आदेश है, जिसमें रिकॉर्ड पर

मौजूद साक्ष्य की सराहना में कोई विकृति या मनमानी नहीं है। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा बनाया गया दृष्टिकोण संभव और प्रशंसनीय है और यदि रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर कोई अन्य दृष्टिकोण संभव है, तो विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण में पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के तहत हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है, क्योंकि निष्कर्ष में कोई विकृति या मनमानी नहीं है।

36. इसलिए, वर्तमान याचिका योग्यता के अभाव में खारिज होने योग्य है। तदनुसार, वर्तमान पुनरीक्षण याचिका को प्रारंभिक चरण में खारिज किया जाता है।

(जितेंद्र कुमार, न्यायमूर्ति)

रविशंकर/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।